CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
2.6 VHP

ॐ

भक्तामर स्तोत्र

3862

प्रकाशक :

सौ. कस्तूरीबाई सामरिया

इन्दौर (म. प्र.)

द्वितीय संस्करण

२००१

मूल्य

जिनेन्द्र भक्ति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

॥ श्री आदिनाथाय नमः ॥

भक्तामरस्तोत्रम्

[श्री मानतुङ्गाचार्य]

भक्तामर-प्रणत-मौलि-मणि-प्रभाणा-
मुद्योतकं दलित-पाप-तमो-वितानम्
सम्यक्-प्रणम्य जिन-पाद-युगं युगादा-
वालम्बनं भव-जले पततां जनानाम् ॥१॥

भक्त अमर नत मुकुट सुमणियों, की सु-प्रभा का जो भासक।
पापरूप अतिसघन तिमिर का ज्ञान-दिवाकर-सा नाशक ॥
भव जल पतित जनों को जिसने, दिया आदि में अवलम्बन।
उनके चरण कमल को करते, सम्यक बारम्बार नमन ॥१॥

यः संस्तुतः सकल-वाङ्मय-तत्त्व-बोधा-
दुद्भूत-बुद्धि-पटुभिः सुर-लोकनाथैः।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितय-चित्त-हरैरुदारैः
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥२॥

सकल वाङ्मय तत्त्वबोध से उद्भव पटुतर धी-धारी।
उसी इन्द्र की स्तुति से है वन्दित जग-जन मन-हारी ॥
अति आश्चर्य की स्तुति करता, उसी प्रथम जिनस्वामी की।
जगनामी सुखधामी तद्भव-शिवगामी अभि रामी की ॥२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बुद्ध्या विनापि विबुधार्चित-पाद-पीठ
स्तोतुं समुद्यत-मतिर्विगत-त्रपोऽहम् ।
बालं विहाय जल-संस्थितमिन्दु-बिम्ब-
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ॥3॥

स्तुति को तैयार हुआ हूँ, मैं निर्बुद्धि छोड़ के लाज ।
विज्ञजनों से अर्चित हे प्रभु, मंदबुद्धि की रखना लाज ॥
जल में पड़े चन्द्र मंडल को, बालक बिना कौन मतिमान ।
सहसा उसे पकड़ने वाली, प्रबलेच्छा करता गतिमान ॥३॥

वक्तुँ गुणान्गुण-समुद्र शशाङ्क-कान्तान्
कस्ते क्षमः सुर-गुरू-प्रतिमोऽपि बुद्ध्या ।
कल्पान्त-काल-पवनोद्धत-नक्र-चक्रं
को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम् ॥४॥

हे जिन ! चंद्रकान्त से बढ़कर, तब गुण विपुल अमलअतिश्वेत ।
कह न सके नर हे गुण-सागर, सुर-गुरु के सम बुद्धिसमेत ॥
मक्र नक्र चक्रादि जन्तु युत, प्रलय पवन से बढ़ा अपार ।
कौन भुजाओं से समुद्र के, हो सकता है परले पार ॥४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सोऽहं तथापि तव भक्ति-वशान्मुनीश
कर्तुं स्तवं विगत-शक्तिरपि प्रवृत्तः ।
प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगो मृगेन्द्रं
नाभ्येति किं निज-शिशोः परिपालनार्थम् ॥५॥

वह मैं हूँ कुछ शक्ति न रखकर, भक्ति प्रेरणा से लाचार ।
करता हूँ स्तुति प्रभु तेरी, जिसे न पौर्वापर्य विचार ॥
निजशिशु की रक्षार्थ आत्म बल, बिना विचारे क्या न मृगी
जाती हैं मृगपति के आगे, प्रेम-रंग में हुई रँगी ॥५॥

अल्प श्रुतं श्रुतवतां परिहास धाम
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम्
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति
तच्चाम्र चारु कलिका निकरैक हेतु ॥६॥

अल्पश्रुत हूँ श्रुतवानों से हास्य कराने का ही धाम ।
करती हैं बाचाल मुझे प्रभु, भक्ति आपकी आठों याम ॥
करती मधुर गान पिक मधु में, जगजन मनहर अति अभिराम ।
उसमें हेतु सरस फल फूलों, के युत हरे भरे तरु आम ॥६॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्वत्संस्तवेन भव-सन्तति-सन्निबद्धं
पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम् ।
आक्रान्त-लोकमलि-नीलमशेषमाशु
सूर्यांशु-भिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ॥७॥

जिन वर की स्तुति करने से, चिर संचित भविजन के पाप ।
पल भर में भग जाते निश्चित, इधर-उधर अपने ही आप ॥
सकललोक में व्याप्त रात्रि का, भ्रमर सरीखा काला ध्वान्त ।
प्रातः रवि की उग्र किरण लख, हो जाता क्षण में प्राणान्त ॥७॥

मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेद-
मारभ्यते तनु-धियापि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी-दलेषु
मुक्ता-फलद्युतिमुपैति ननूद-बिन्दुः ॥८॥

मैं मति हीन दीन प्रभु तेरी, शुरू करूं स्तुति अघहान ।
प्रभु-प्रभाव ही चित्त हरेगा, सन्तों का निश्चय से मान ॥
जैसे कमल-पत्र पर जल-कण, मोती कैसे आभावान ।
दिपते है फिर छिपते हैं असली मोती में हे भगवान ॥८॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आस्तां तव स्तवनमस्त-समस्त-दोषं
त्वत्सङ्कथापि जगतां दुरितानि हन्ति।
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥९॥

दूर रहे स्तोत्र आपका, जो कि सर्वथा है निर्दोष।
पुण्य कथा ही किन्तु आपकी, हर लेती है कल्मष कोष॥
प्रभा प्रफुल्लित करती रहती, सर के कमलों को भरपूर।
फेंका करता सूर्य-किरण को, आप रहा करता हैं दूर॥९॥

नात्यद्भुतं भुवन-भूषण भूत-नाथ
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥१०॥

त्रिभुवनतिलक जगत्पति हे प्रभु ! सद्गुरुओं के हैं गुरुवर्य्य।
सद्भक्तों को निजसम करते, इसमें नहीं अधिक आश्चर्य॥
स्वाश्रित जन को निजसम करते, धनी लोग धन धरनी सें।
नहीं करें तो उन्हें लाभ क्या? उन धनिकों की करनी से॥१०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दृष्ट्वा भवन्तमनिमेष-विलोकनीयं
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षु ।
पीत्वा पयः शशिकर-द्युति-दुग्ध-सिन्धोः
क्षारं जलं जल-निधेरसितुं क इच्छेत् ॥११॥

हे अनिमेष विलोकनीय प्रभु, तुम्हें देखकर परम-पवित्र ।
तोषित होते कभी नहीं हैं, नयन मानवों के अन्यत्र ॥
चन्द्र-किरण सम उज्जवल निर्मल, क्षीरोदधि का कर जलपान ।
कालोदधि का खारा पानी, पीना चाहे कौन पुमान ॥११॥

यैः शान्त-राग-रुचिभिः परमाणुभिस्त्वं
निर्मापितस्त्रिभुवनैक-ललाम-भूत
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां
यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥१२॥

जिन जितने जैसें अणुओं से निर्मापित प्रभु तेरी देह ।
थे उतने वैसे अणु जग में, शांत-राग-मय निःसन्देह ॥
हे त्रिभुवन के शिरोभाग के अद्वितीय आभूषण-रूप ।
इसीलिए तो आप सरीखा, नहीं दूसरों का है रुप ॥१२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरग-नेत्र-हारि
निःशेष-निर्जित-जगत्त्रितयोपमानम् ।
बिम्बं कलङ्क-मलिनं क्व निशाकरस्य
यद्वासरे भवति पाण्डु-पलाश कल्पम् ॥13॥

कहाँ आपका मुख अतिसुन्दर, सुर-नर-उरग नेत्र-हारी ।
जिसने जीत लिये सब जग के, जितने थे उपमाधारी ॥
कहाँ कलंकी बंक चन्द्रमा, रंक-समान कीट-सा दीन ।
जो पलाश-सा फीका पड़ता, दिन में होकरके छवि-छीन ॥१३॥

सम्पूर्ण-मण्डल-शशाङ्क-कला-कलाप-
शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घयन्ति ।
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर-नाथमेकं
कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम् ॥१४॥

तव गुण पूर्ण-शशांक कान्तिमय, कला-कलापों से बढ़के ।
तीन लोक में व्याप रहे हैं, जो कि स्वच्छता में चढ़कें ॥
विचरें चाहे जहां कि जिनको, जगन्नाथ का एकाधार ।
कौन माई का जाया रखता, उन्हें रोकने का अधिकार ॥१४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभि-
नीतं मनागपि मनो न विकार-मार्गम् ।
कल्पान्त-काल-मरुता चलिताचलेन
किं मन्दराद्रि-शिखरं चलितं कदाचित् ॥१५॥

मद की छकीं अमर ललनाएँ, प्रभु के मन में तनिक विकार ।
कर न सकीं आश्चर्य कौन सा, रह जाती है मन को मार ॥
गिर गिर जाते प्रलय पवन से, तो फिर क्या वह मेरु-शिखर ।
हिल सकता है रंच-मात्र भी, पाकर झंझावात प्रखर ॥१५॥

निर्धूम-वर्तिरपवर्जित-तैल-पूरः
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटी-करोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥१६॥

धूप न बत्ती तेल बिना ही, प्रकट दिखातें तीनों लोक ।
गिरि के शिखर उड़ाने वाली, बुझा न सकती मारुत झोक ॥
तिस पर सदा प्रकाशित रहते, गिनते नहीं कभी दिन रात ।
ऐसे अनुपम आप दीप हैं, स्व-पर-प्रकाशक जग-विख्यात ॥१६॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नास्तं कदाचिदुपयासि न राहु-गम्यः
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति ।
नाम्भोधरोदर-निरुद्ध-महा-प्रभावः ।
सूर्यातिशायि-महिमासि मुनीन्द्र लोके ॥१७॥

अस्त न होता कभी न जिसको, ग्रस पाता हैं राहु प्रबल ।
एक साथ बतलानें वाला, तीन लोक का ज्ञान बिमल ॥
रुकता कभी प्रभाव न जिसका, बादल की आकर के ओट ।
ऐसी गौरव-गरिमा वाले, आप अपूर्व दिवाकर कोट ॥१७॥

नित्योदयं दलित-मोह-महान्धकारं
गम्यं न राहु-वदनस्य न वारिदानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति
विद्योतयज्जगदपूर्व-शशाङ्क-बिम्बम् ॥१८॥

मोह महातम दलने वाला, सदा उदित रहने वाला ।
राहु न बादल से दबता पर, सदा स्वच्छ रहने वाला ॥
विश्व-प्रकाशक मुखसरोज तब, अधिक कांतिमय शांतिस्वरूप ।
है अपूर्व जगका शशि-मण्डल, जगत शिरोमणि शिव का भूप ।१८।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा
युष्मन्मुखेन्दु-दलितेषु तमःसु नाथ ।
निष्पन्न-शालि-वन-शालिनि जीव-लोके
कार्यं कियज्जलधरैर्जल-भार-नम्रैः ॥१९॥

नाथ आपका मुख जब करता, अन्धकार का सत्यानाश ।
तब दिन में रवि और रात्रीमें, चन्द्र-विम्ब का विफल प्रयास ॥
धान्य-खेत जब धरती तल के, पके हुये हों अति अभिराम ।
शोर मचाते जल को लादे, हुये घनों से तब क्या काम ॥१९॥

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं
नैवं तथा हरि-हरादिषु नायकेषु ।
तेजःस्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं
नैवं तु काच-शकले किरणाकुलेऽपि ॥२०॥

जैसा शोभित होता प्रभु का, स्वपर-प्रकाशक उत्तम ज्ञान ।
हरिहरादि देवों में वैसा, कभी नहीं हो सकता भान ॥
अति ज्योतिर्मय महारतन का, जो महत्व देखा जाता ।
क्या वह किरणाकुलित काँच में, अरे कभी लेखा जाता ॥२०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मन्ये वरं हरि-हरादय एव दृष्टा
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः
कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ॥२१॥

हरिहरादि देवों का ही मैं, मानुं उत्तम अवलोकन ।
क्योंकि उन्हें देखने भर से, तुझसे तोषित होता मन ॥
है परन्तु क्या तुम्हें देखने, से हें स्वामिन् ! मुझको लाभ ।
जन्म जन्म में भी न लुभा पाते कोई, यह मम, अमिताभ ॥२१॥

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्र-रश्मिं
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥२२॥

सौ सौ नारी सौ सौ सुत को, जनती रहती सौ सौ ठौर ।
तुम से सुत को जनबने वाली, जननी महती क्या हैं और ॥
तारागण को सर्व दिशाएँ, धरे नहीं कोई खाली ।
पूर्व दिशा ही पूर्ण प्रतापी, दिनपति को जनबने वाली ॥२२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस-
मादित्य-वर्णममलं तमसः पुरस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र पन्थाः ॥२३॥

तुम को परम पुरुष मुनि मानें, विमल वर्ण रबि तमहारी ।
तुम्हें प्राप्त कर मृत्युञ्जय के, बन जाते जन अधिकारी ॥
तुम्हें छोड़कर अन्य न कोई, शिवपुर-पथ बतलाता है ।
किन्तु विपर्यय मार्ग बता कर, भव भव में भटकाता है ॥२३॥

त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं
ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् ।
योगीश्वरं विदित-योगमनेकमेकं
ज्ञान-स्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ॥२४॥

तुम्हें आद्य अक्षय अनन्त प्रभु, एकानेक तथा योगीश ।
ब्रहमा ईश्वर या जगदीश्वर, विदितयोग मुनिनाथ मुनीश ॥
बिमल ज्ञानमय या मकरध्वज, जगन्नाथ जगपति जगदिश ।
इत्यादिक नामों कर माने, सन्त निरन्तर विभो निधीश ॥२४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बुद्धस्त्वमेव निबुधार्चित-बुद्धि-बोधात्
त्वं शङ्करोऽसि भुवन-त्रय-शङ्करत्वात्।
धातासि धीर शिव-मार्ग-विधेर्विधानात्
व्यक्तं त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥

ज्ञान पूज्य है, अमर आपका इसीलिए कहलाते बुद्ध।
भुवनत्रय के सुख-सम्वर्द्धक, अतः तुम्हीं शंकर हो शुद्ध॥
मोंक्ष-मार्ग के आद्य प्रवर्त्तक, अतः विधाता कहे गणेश।
तुम सम अवनी पर पुरुषोत्तम, और कौन होगा अखिलेश।२५।

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्ति-हराय नाथ
तुभ्यं नमः क्षिति-तलामल-भूषणाय।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय
तुभ्यं नमो जिन भवोदधि-शोषणाय ॥२६॥

तीन लोक कें दुःखहरण कर-ने वाले हे तुम्हे नमन।
भूमण्डल के निर्मल-भूषण, आदि जिनेश्वर तुम्हें नमन॥
हें त्रिभुवन कें अखिलेश्वर हो, तुमको बारम्बार नमन।
भव सागर के शोषक पोषक, भव्य जनों के तुम्हें नमन॥२६॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै-
स्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश ।
दोषैरुपात्तविविधाश्रय-जात-गर्वैः
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥

गुणसमूह एकत्रित होकर, तुझमें यदि पा चुके प्रवेश ।
क्या आश्चर्य न मिल पाये हो, अन्य आश्रय उन्हे जिनेश ॥
देव कहे जाने वालो से, आश्रित होकर गर्वित दोष ।
तेरी ओर न झांक सके वह, स्वप्नमात्र में हे गुणकोष ॥२७॥

उच्चैरशोक-तरु-संश्रितमुन्मयूख-
माभाति रूपममलं भवतो नितान्तम् ।
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्त-तमो-वितानं
बिम्बं रवेरिव पयोधर-पार्श्ववर्ति ॥२८॥

उन्नत तरु अशोक के आश्रित, निर्मल किरणोन्नत वाला ।
रूप आपका दिखता सुन्दर, तमहर मनहर छवि वाला ॥
वितरण किरण निकर तमहारक, दिनकर घन के अधिक समीप ।
नीलाचल पर्वत पर होकर, नीराजन करता ले दीप ॥२८॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सिंहासने मणि-मयूख-शिखा-विचित्रे
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम् ।
बिम्बं वियद्विलसदंशुलता-वितानं
तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्र-रश्मेः ॥२९॥

मणि-मुक्ता किरणों से चित्रित, अद्भुत शोभित सिंहासन ।
कान्तिमान् कंचन-सा दिखता, जिस पर तव कमनीय बदन ॥
उदयाचल के तुंग शिखर से, मानो सहस्त्ररश्मि वाला ।
किरण-जाल फैलाकर निकला, हो करने को उजियाला ॥२९॥

कुन्दावदात-चल-चामर-चारु-शोभं
विभ्राजते तव वपु कलधौत-कान्तम् ।
उद्यच्छशांक-शुचि-निर्झर-वारि-धार-
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥30॥

ढुरते सुन्दर चँवर विमल अति, नवल कुन्द के पुष्प-समान ।
शोभा पाती देह आपकी, रौप्य धवल-सी आभावान ॥
कनकाचल के तुंग शृङ्ग से, झर झर झरता है निर्झर ।
चन्द्र-प्रभा सम उछल रही हो, मानो उसकें ही तप-डर ॥३०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छत्र-त्रयं तव विभाति शशाङ्क-कान्त-
मुच्चैः स्थितं स्थगित-भानु-कर-प्रतापम् ।
मुक्ता-फल-प्रकर-जाल-विवृद्धशोभं
प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ॥३१॥

चन्द्र-प्रभा सम झल्लरियों से, मणि-मुक्तामय अति कमनीय ।
दीप्तिमान् शोभित होते हैं, सिर पर छत्रत्रय भवदीय ॥
ऊपर रहकर सूर्य-रशिम का, रोक रहे हैं प्रखर-प्रताप ।
मानों वे घोषित करते हैं, त्रिभुवन के परमेश्वर आप ॥३१॥

गम्भीर-तार-रव-पूरित-दिग्विभाग-
स्त्रैलोक्य-लोक-शुभ-सङ्गम-भूति-दक्षः ।
सद्धर्मराज-जय-घोषण-घोषकः सन्
खे दुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ॥३२॥

ऊँचे स्वर से करने वाली, सर्व दिशाओं में गुञ्जन ।
करने वाली तीन लोक के, जन-जनका शुभ-सम्मेलन ॥
पीट रही हैं डंका—"हो सत् धर्म-राज की ही जय-जय ।
इस प्रकार बज रही गगन में, भेरी तव यश की अक्षय ॥३२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मन्दार-सुन्दर-नमेरु-सुपारिजात-
सन्तानकादि-कुसुमोत्कर-वृष्टि-रुद्धा ।
गन्धोद-बिन्दु-शुभ-मन्द-मरुत्प्रपाता
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा ॥33॥

कल्पवृक्ष के कुसुम मनोहर, परिजात एवं मंदार ।
गन्धोदक की मन्द वृष्टि कर-ते है प्रभुदित देव उदार ॥
तथा साथ ही नभ से बहती, धीमी धीमी मन्द पवन ।
पंक्ति बांध कर बिखर रहे हों, मानों तेरे दिव्य–वचन ॥३३॥

शुम्भत्प्रभा-वलय-भूरि-विभा विभोस्ते
लोकत्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ति ।
प्रोद्यद्दिवाकर-निरन्तर-भूरि-संख्या
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोम-सौम्याम् ॥34॥

तीन लोक की सुन्दरता यदि, मूर्तिमान्न बनकर आवे ।
तन-भा-मंडल की छवि लखकर, तब सन्मुख शरमा जावे ॥
कोटिसूर्य के ही प्रताप सम, किन्तु नहीं कुछ भी आताप ।
जिनके द्वारा चन्द्र सुशीतल, होता निष्प्रभ अपने आप ॥३४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्वर्गापवर्ग-गम-मार्ग-विमार्गणेष्टः
सद्धर्म-तत्व-कथनैक-पटुस्त्रिलोक्याः ।
दिव्य-ध्वनिर्भवति ते विशदार्थ-सर्व-
भाषा-स्वभाव-परिणाम-गुणैः-प्रयोज्यः ॥३५॥

मोक्ष-स्वर्ग के मार्ग प्रदर्शक, प्रभुवर तेरे दिव्य-वचन ।
करा रहे हैं 'सत्य-धर्म' के, अमर-तत्त्व का दिग्दर्शन ॥
सुनकर जग के जीव वस्तुत, कर लेते अपना उद्धार ।
इस प्रकार परिवर्तित होते, निज-निज भाषा के अनुसार ॥३५॥

उन्निद्र-हेम-नव-पंकज-पुञ्ज-कान्ती
पर्युल्लसन्नख-मयूख-शिखाभिरामौ ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥३६॥

जगमगात नख जिसमें शोभें, जैसे नभमें चन्द्रकिरण ।
विकसित नूतन सरसीरुहसम, हे प्रभु तेरे विमल चरण ॥
रखते जहाँ वहीं रचते हैं, स्वर्णकमल, सुरदिव्य ललाम ।
अभिनन्दन के योग्य चरण तव, भक्ति रहे उनमें अभिराम ।३६।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र
धर्मोपदेशन-विधौ-न तथा परस्य ।
यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा
तादृक्कुतो ग्रह-गणस्य विकाशिनोऽपि ॥३७॥

धर्म-देशना के विधान में, था जिनवर का जो ऐश्वर्य ।
वैसा क्या कुछ अन्य कुदेवो, में भी दिखता हैं सौन्दर्य ॥
जो छवि घोर–तिमिर के नाशक, रवि में है देखी जाती ।
वैसी ही क्या अतुल कान्ति, नक्षत्रों में लेखी जाती ॥३७॥

श्च्योतन्मदाविल-विलोल-कपोल-मूल-
मत्त-भ्रमद्-भ्रमर-नाद-विवृद्ध-कोपम् ।
ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तं
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ॥३८॥

लोल कपोलों से झरती है, जहां निरन्तर मद की धार ।
होकर अति मदमत्त की जिस पर, करते हैं भौंरे गुंजार ॥
क्रोधासक्त हुआ यों हाथी, उद्धत ऐरावत सा काल ।
देख भक्त छुटकारा पाते, पाकर तव आश्रय तत्काल ॥३८॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भिन्नेभ-कुम्भ-गलदुज्ज्वल-शोणिताक्त-
मुक्ता-फल-प्रकर-भूषित-भूमि-भागः ।
बद्ध-क्रमः क्रम-गतं हरिणाधिपोऽपि
नाक्रामति क्रम-युगाचल-संश्रितं ते ॥३९॥

क्षत विक्षत कर दिये गजो के, जिसने उन्नत गण्डस्थल ।
कांतिमान् गज-मुक्ताओं से, पाट दिया हो अवनी-तल ॥
जिन भक्तों कों तेरे चरणों, के गिरि की हो उन्नत ओट ।
ऐसा सिंह छलाँगें भरकर, क्या उस पर कर सकता चोट?॥३९॥

कल्पान्त-काल-पवनोद्धत-वह्नि-कल्पं
दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम् ।
विश्वं जिघित्सुमिव संमुखमापतन्तं
त्वन्नाम-कीर्तन-जलं शमयत्यशेषम् ॥४०॥

प्रलय काल की पवन उठाकर, जिसे बढ़ा देती सब ओर ।
फिकें फुलिंगे ऊपर तिरछे, अंगारों का भी हो जोर ॥
भुवनत्रय को निगला चाहे, आती हुई अग्नि भभकार ।
प्रभु के नाम-मन्त्र जल से वह, बुझ जाती है उसही बार ॥४०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रक्तेक्षणं समद-कोकिल-कण्ठ-नीलं
क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम् ।
आक्रामति क्रम-युगेण निरस्त-शंक-
स्त्वन्नाम-नाग-दमनी हृदि यस्य पुंसः ॥४१॥

कंठ कोकिला सा अति काला, क्रोधित हो फण किया विशाल ।
लाल-लाल लोचन करके यदि, झपटे नाग महा विकराल ॥
नाम-रूप तव अहि-दमनी का, लिया जिन्होंने हो आश्रय ।
पग रख कर निशंक नाग पर, गमन करें वे नर निर्भय ॥४१॥

वल्गत्तुरङ्ग-गज-गर्जित-भीमनाद-
माजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम् ।
उद्यद्दिवाकर-मयूख-शिखापविद्धं
त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ॥४२॥

जहां अश्व की और गजों की, चीत्कार सुन पड़तीं घोर ।
शूरवीर नृप की सेंनाएँ, रव करती हों चारों ओर ॥
वहाँ अकेला शक्तिहीन नर, जप कर सुन्दर तेरा नाम ।
सूर्य-तिमिर सम शूर-सेन्य का, कर देता है काम तमाम ॥४२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुन्ताग्र-भिन्न-गज-शोणित-वाऽिवाह-
वेगावतार-तरणातुर-योध-भीमे ।
युद्धे जयं विजित-दुर्जय-जेय-पक्षा-
स्त्वत्पाद-पंकज-वनाश्रयिणो लभन्ते ॥४३॥

रण में भालों से वेधित गज, तन से बहता रक्त अपार ।
वीर लड़ाकू जहँ आतुर हैं, रुधिर-नदी करने को पार ॥
भक्त तुम्हारा हो निराश तहँ, लख अरिसेंना दुर्जयरूप ।
तव पादारविन्द पा आश्रय, जय पाता उपहार-स्वरूप ॥४३॥

अम्भोनिधौ क्षुभित-भीषण-नक्र-चक्र-
पाठीन-पीठ-भय-दोल्वण-वाडवाग्नौ ।
रङ्गत्तरङ्ग-शिखर-स्थित-यान-पात्रा-
स्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति ॥४४॥

वह समुन्द्र कि जिसमें होंवें, मच्छ मगर एवं घड़ियाल ।
तूफां लेकर उठती होवें, भयकारी लहरें उत्ताल ॥
भ्रमर-चक्र में फंसी हुई हो, बीचों बीच अगर जल-यान ।
छुटकारा पा जाते दुःख से, करने वाले तेरा ध्यान ॥४४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उद्भूत-भीषण-जलोदर-भार-भुग्नाः
शोच्यां दशामुपगताश्च्युत-जीविताशाः ।
त्वत्पाद-पंकज-रजोमृत-दिग्ध-देहा
मर्त्या भवन्ति मकरध्वज-तुल्यरूपाः ॥४५॥

असहनीय उत्पन्न हुआ हो, विकट जलोदर पीड़ा भार ।
जीने की आशा छोड़ी हो, देख दशा दयनीय अपार ॥
ऐसे व्याकुल मानव पाकर, तेरी पद–रज संजीवन ।
स्वास्थ्य-लाभ कर बनता उसका, कामदेव सा सुन्दर तन ।४५।

आपाद-कण्ठमुरु-शृंखल-वेष्टिताङ्गा
गाढं बृहन्निगड-कोटि-निघृष्ट-जङ्घा ।
त्वन्नाम-मन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः
सद्यः स्वयं विगत-बन्ध-भया भवन्ति ॥४६॥

लोह-शृंखला से जकड़ी है, नख से सिख तक देह समस्त ।
घुटने-जंघे छिले बेड़ियों, से अधीर जो है अतित्रस्त ॥
भगवन ऐसे बन्दीजन भी, तेरे नाम–मन्त्र की जाप ।
जप कर गत-बन्धन हो जाते, क्षण भर में अपने ही आप ॥४६।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मत्तद्विपेन्द्र-मृगराज-दवानलाहि-
संग्राम वारिधि-महोदर-बन्धनोत्थम् ।
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥४७॥

वृषमेश्वर के गुण स्तबन का, करते निशिदिन जो चिंतन ।
भय भी भयाकुलित हो उनसे, भग जाता है हे स्वामिन ॥
कुञ्जर-समर-सिंह-शोक-रुज, अहि दावानल कारागार ।
इनके अतिभीषण दुःखों का, हो जाता है क्षण में संहार ॥४७॥

स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां
भक्त्या मया रुचिर-वर्ण-विचित्र-पुष्पाम् ।
धत्ते जनो य इह कण्ठ-गतामजस्रं
तं 'मानतुङ्ग'मवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥४८॥

हे प्रभु तेरे गुणोद्यान की, क्यारी से चुन दिव्य-ललाम ।
गूंथी विविध वर्ण सुमनों की, गुण-माला सुन्दर अभिराम ॥
श्रद्धासहित भविकजन जो भी, कण्ठाभरण बनाते हैं ।
मानतुंग-सम निश्चित सुन्दर, मोक्ष-लक्ष्मी पाते हैं ॥४८॥

महा मन्त्र

ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं अर्हं वृषभनाथ तीर्थङ्कराय नमः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ॐ

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

卐 आरती 卐

आरती नाथ ! करूँ तेरी ।
हरो प्रभु ! भव बाधा मेरी ॥

जय जय जय श्री आदि जिनेश्वर ! नाभिराय कुलचन्द्र ।
जन्में तुम तब रत्न वृष्टि कर मुदित हुए सुरवृन्द ॥
नीर भर निर्मल क्षीर समान– ।
न्हवन कर इन्द्र किया गुणगान ॥ आरती ॥१॥

शासन करते समय विभो ! तव गया प्रजा पर ध्यान ।
जीवन यापन हित कृषि आदिक विधि का किया विधान ॥
राज्य तज गये विपिन की ओर ।
तपश्चर्या की सतत कठोर ॥ आरती ॥२॥

किया अंत में आत्मलीन बन कर्म शत्रु का नाश ।
जगती तल पर दिव्य ज्ञान का फैला विमल प्रकाश ॥
धर्म का दे अनुपम संदेश– ।
विश्व के नष्ट किये सब क्लेश ॥ आरती ॥३॥

नित्य निरंजन, भव भय भंजन, अशरण शरण मुनीश ।
भ्रम तम वारक, कल मल हारक, जग जन तारक ईश ॥
तुम्हारे गुण गण की जिनचन्द्र ।
जपा करते माला मुनिवृन्द ॥ आरती ॥४॥

तीर्थ चाँद खेड़ी आ भविजन ली तव शरण अवार ।
भव सागर में मग्न जनों का करिये बेढ़ा पार ॥
उभय कर जोड़ नवाऊँ शीश ।
विनय स्वीकार करें जगदीश ॥ आरती ॥५॥

५/१, तम्बोली बाखल, इन्दौर
१–२–८४

विनीत
नाथुराम डोंगरीय जैन न्यायतीर्थ
'अवनीन्द्र'

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्राप्ति स्थान :-

रतनलाल नानूराम सामरिया

❁ क्लॉथ मर्चेन्ट ❁

८५, एम. टी. क्लॉथ मार्केट, इन्दौर

फोन दुकान ३२४१७ फोन निवास ३४७१८

❁ निर्मल प्रिन्टर्स, इन्दौर फोन ३४५७३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi